बिज़नेस स्टैंडर्ड

अब एक महीने में ट्रेडमार्क

शुभायन चक्रवर्ती

देश में बौद्धिक संपदा अधिकार प्रणाली को मजबूत बनाने और बुनियादी ढांचे को सुधारकर अधिक से अधिक बौद्धिक संपदा तैयार करने के लिए सरकार ने राष्ट्रीय बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) नीति को मंजूरी दे दी है। इस नीति का बहुत अरसे से इंतजार किया जा रहा था और इसकी देखरेख का जिम्मा औद्योगिक नीति एवं संवद्र्घन विभाग (डीआईपीपी) को दिया गया है। इसके जरिये सरकार व्यापक आर्थिक और सामाजिक लाभ के लिए बौद्धिक संपदा अधिकार का लाभ उठाने का प्रयास करेगी।

डीआईपीपी के सचिव रमेश अभिषेक ने बताया कि देश में विभिन्न प्रकार की बौद्धिक संपदा की रक्षा करने वाले मौजूदा कानूनों में इस नीति से कोई संशोधन नहीं होगा। उसके बजाय यह नीति उन सभी कानूनों को एक साथ लाने का काम करेगी ताकि अधिक क्षमता के साथ काम किया जा सके। इस तरह अभी तक मानव संसाधन विकास मंत्रालय एवं इलेक्ट्रॉनिक्स तथा सूचना प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत आने वाले कॉपीराइट अधिनियम, 1957 और सेमीकंडक्टर एकीकृत सर्किट लेआउट-डिजाइन अधिनियम, 2000 को अब डीआईपीपी देखेगा। इसके अलावा बौद्धिक संपदाओं को बढ़ावा देने के लिए आईपीआर संवद्र्घन एवं प्रबंधन प्रकोष्ठï भी इसी विभाग के अंतर्गत काम करेगा। वित्त मंत्री अरुण जेटली ने कहा कि यह नीति बौद्धिक संपदा अधिकारों की पहुंच बढ़ाने और उनके प्रति जागरूकता लाने, मंजूरी प्रक्रिया तेज करने और नियमों को प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए लाई गई है।

आईपीआर कार्यक्रमों को विभिन्न उद्योगों की जरूरतों के हिसाब से तैयार किया जाएगा और ग्रामीण एवं हाशिये पर रहने वाले नागरिकों तक इसकी पहुंच को ध्यान में रखा जाएगा। छोटे कारोबारों और अन्य हितधाकरों, जैसे दस्तकारों और परंपरागत कारीगरों पर भी ध्यान दिया जाएगा, जो प्रक्रिया से अभी तक बाहर थे। अब देश के प्रमुख शोध एवं विकास संगठनों और शिक्षण संस्थानों में बौद्धिक संपदा अधिकारों को पाठ्ïयक्रम का अनिवार्य हिस्सा बनाया जाएगा।

इससे पहले सरकार ने आईपी पंजीकरण प्रक्रिया तेज करने के लिए 458 नए परीक्षकों और अनुबंध पर 263 परीक्षकों को नियुक्त किया है ताकि पेटेंट, डिजाइन और ट्रेडमार्क सेे संबंधित लंबित आवेदनों को जल्दी मंजूरी मिल सके। डीआईपीपी का लक्ष्य लंबित बौद्धिक संपदा अधिकारों के आवेदनों को 19 माह में मंजूरी देना है, जिसमें अभी 5 से 7 साल लग जाते हैं। इसके साथ ही 2017 से ट्रेडमार्क के पंजीकरण की अवधि को मौजूदा 13 माह से कम कर एक माह करने की योजना है। वाणिज्य मंत्रालय के आंकड़ों के मुताबिक देश में करीब 2,37,000 पेटेंट के आवेदन लंबित हैं। भारत में बौद्धिक संपदा के उल्लंघन को लेकर यह अमेरिका की प्राथमिक वॉच लिस्ट में शामिल है। अनुमान के मुताबिक भारत में म्यूजिक और फिल्म पाइरेसी से करीब 4 अरब डॉलर सालाना और बिना लाइसेंस वाले सॉफ्टवेयर से 3 अरब डॉलर सालाना का नुकसान होता है। हालांकि भारत इस तरह की रिपोर्ट का विरोध करता रहा है।

जनसत्ता

टूटती सीमाएं

कार्यपालिका या विधायिका अगर न्यायपालिका के अधिकार क्षेत्र में दखल दे, तो इसे कोई भी उचित नहीं ठहरा सकता, बल्कि इसे तानाशाही का ही लक्षण माना जाएगा।

वित्तमंत्री अरुण जेटली ने बुधवार (11 मई) को राज्यसभा में एक अहम मसला उठाया, जिस पर बहस की दरकार है। उन्होंने कहा कि न्यायपालिका धीरे-धीरे विधायिका के अधिकार क्षेत्र को कम करती जा रही है। यही नहीं, वे मानते हैं कि कार्यपालिका के कार्यक्षेत्र में भी न्यायपालिका अतिक्रमण कर रही है। अगर ऐसी स्थिति है, तो इसे कोई स्वस्थ रुझान नहीं कहा जा सकता, क्योंकि हमारी संवैधानिक व्यवस्था या हमारा लोकतंत्र 'शक्तियों के पृथक्करण' के सिद्धांत पर आधारित है। कार्यपालिका या विधायिका अगर न्यायपालिका के अधिकार क्षेत्र में दखल दे, तो इसे कोई भी उचित नहीं ठहरा सकता, बल्कि इसे तानाशाही का ही लक्षण माना जाएगा। इसी तरह लोकतांत्रिक व्यवस्था के दूसरे क्षेत्रों में अदालती दखलंदाजी भी सही नहीं कही जा सकती। जेटली का बयान जिस संदर्भ में आया वह स्वयं में शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत की अनदेखी का एक उदाहरण हो सकता है। वे राज्यसभा में कांग्रेस सदस्यों की इस मांग का जवाब दे रहे थे कि जीएसटी से संबंधित कोई विवाद उठने की सूरत में उसके निपटारे के लिए एक स्वतंत्र व्यवस्था बननी चाहिए, जिसका मुखिया कोई जज हो। जेटली ने कहा कि अगर यह मांग मान ली जाए तो इसका मतलब होगा कि कर-निर्धारण की प्रक्रिया को कार्यपालिका के हाथ से निकल जाने देना, जो कि हमेशा उसका अधिकार क्षेत्र रहा है। जीएसटी संबंधी विवाद के निपटारे के लिए कोई तंत्र बनाना जरूरी हो सकता है, पर उसके मुखिया का न्यायिक पृष्ठभूमि से होना जरूरी क्यों हो? जेटली के ताजा बयान से बहुत पहले से न्यायिक सक्रियता पर बहस चली आ रही है। भिन्न-भिन्न लोगों की इस पर भिन्न-भिन्न राय रही है। कुछ न्यायिक सक्रियता को देश और समाज के लिए अच्छा मानते हैं तो कुछ इसे हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए एक खतरे के रूप में देखते हैं। दरअसल, कुछ ऐसे मामले हैं जो कार्यपालिका या विधायिका से भी वास्ता रखते हैं और न्यायपालिका से भी। अगर किसी के मौलिक अधिकार का हनन हो रहा हो या किसी कानून की व्याख्या की जरूरत हो, तो उस मामले का अदालत में जाना और उस पर सुनवाई होना स्वाभाविक तथा उचित है। पर अगर नीति निर्माण व प्रशासनिक क्षेत्र में अदालत का दखल होता है तो वह एक गलत मिसाल बनता है। पार्किंग शुल्क तय करने, कचरे के निपटारे, यातायात नियंत्रण, रैगिंग रोकने जैसे मामलों में किसी अदालत को पड़ने की क्या जरूरत है? नदी जोड़ योजना एक नीति निर्धारण संबंधी विषय है, पर सर्वोच्च न्यायालय ने अपने एक फैसले में इस योजना के क्रियान्वयन की बाबत भी सरकार को तलब कर डाला था। न्यायिक सक्रियता का सबसे विवादास्पद उदाहरण तो शायद खुद कोलेजियम प्रणाली है, जिसकी परिकल्पना हमारे संविधान में नहीं थी, पर जिसकी ईजाद सर्वोच्च अदालत ने अपने एक फैसले के जरिए कर ली। संविधान में तो, प्रधान न्यायाधीश की सलाह से, जजों की नियुक्ति का अधिकार राष्ट्रपति को दिया गया था, और यही व्यवस्था कई दशक तक चलती रही। पर कोलेजियम प्रणाली के तहत जज ही जजों की नियुक्ति करते हैं। इसके औचित्य पर शुरू से सवाल उठते रहे हैं। कोलेजियम की जगह न्यायिक नियुक्ति एवं जवाबदेही आयोग बनाने के मकसद से संसद ने एक कानून आम सहमति से पारित किया था। पर सर्वोच्च न्यायालय को यह गवारा नहीं हुआ। संसद में सर्वसम्मति से पारित इस कानून को उसने असंवैधानिक ठहरा दिया। कानून बनाने के संसद के अधिकार का क्या हुआ?

दैनिक भास्कर

मानहानि रोकने के लिए फौजदारी कानून की ढाल

सुप्रीम कोर्ट ने मानहानि के डेढ़ सौ साल पुराने फौजदारी कानून में परिवर्तन से इनकार करके यह संदेश दे दिया है कि अभिव्यक्ति की आजादी के नाम पर दूसरों की इज्जत पर कीचड़ उछालने की सहज इजाजत नहीं दी जा सकती, क्योंकि आधुनिक दौर में अभिव्यक्ति के तमाम मंचों के उपलब्ध होने से किसी पर कोई भी आरोप लगाना आसान हो गया है। इसलिए उस पर दंडात्मक विधान भी जरूरी है। रोचक तथ्य यह है कि इस कानून को चुनौती ऐसे राजनेताओं और पत्रकारों ने दी थी, जिनमें से कुछ का तो काम ही दूसरों को लगातार आरोपों के कठघरे में खड़े करना है। हालांकि, स्थिति उसके उलट भी है और इस समय समाज में ऐसे लोग भी पैदा हो गए हैं, जिनका काम किसी भी राजनीतिक बयान या पत्रकारीय रपट व टिप्पणी पर मानहानि का मुकदमा दायर कर देना है। यह काम एक सहज पीड़ा और उसके निदान के लिए नहीं बल्कि एक धंधे के तौर पर किए जाते हैं। यह दोनों स्थितियां लोकतंत्र के लिए स्वस्थ नहीं हैं। अगर बात-बात पर राजनेता की जबान थाम ली जाएगी या पत्रकार की कलम और कैमरा निशाने पर लिया जाएगा या हमेशा कोई न कोई स्कैंडल ही उछाला जाता रहेगा तो न तो स्वस्थ जनमत का निर्माण हो पाएगा और न ही किसी की प्रतिष्ठा सुरक्षित बच पाएगी।

अभिव्यक्ति की आजादी होनी चाहिए और उससे आहत लोगों को न्यायालय की शरण में जाने का अधिकार भी होना चाहिए। क्योंकि अगर न्यायालय से कड़ी कार्रवाई की मांग का हक नहीं रहेगा तो उसके प्रतिकार में हिंसा का ही एक मात्र उपाय बचेगा और वह लोकतंत्र के लिए और भी घातक होगा। अभी भारतीय दंड संहिता की धारा 499 और 500 के तहत आपराधिक मानहानि के लिए दो साल की सजा और जुर्माना है। जिन लोगों ने सुप्रीम कोर्ट में इस कानून को चुनौती दी थी उनकी दलील थी कि कुछ राजनेताओं ने अपने विरुद्ध बयान देने वालों पर सैकड़ों मुकदमे दायर करवा दिए हैं। जनहित याचिका करने वालों में अरविंद केजरीवाल, राहुल गांधी और सुब्रह्मण्यम स्वामी के साथ पत्रकार राजदीप सरदेसाई जैसे लोग भी शामिल थे। उन्होंने इस बारे में दुनिया के कुछ विकसित देशों के उदाहरण दिए थे, जहां पर अब मानहानि फौजदारी नहीं दीवानी या अपकृत्य यानी टार्ट्स का मामला है। किंतु सुप्रीम कोर्ट ने भारत जैसे बड़बोले और खुन्नस वाले देश में इन फौजदारी कानूनों को कायम रखकर उचित ही किया है, क्योंकि लोकतांत्रिक संवाद में कानून का खौफ भी जरूरी है।

ट्रेडमार्क रजिस्ट्रेशन 30 दिन में, पूरी प्रक्रिया ऑनलाइन होगी

ट्रेडमार्करजिस्ट्रेशन की पूरी प्रक्रिया ऑनलाइन की जाएगी। इससे कंपनियां सिर्फ 30 दिनों में अपने ट्रेडमार्क का रजिस्ट्रेशन करवा सकेंगी। गुरुवार को कैबिनेट ने नई इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी राइट्स (आईपीआर) या पेटेंट पॉलिसी को मंजूरी दी। इसी में यह प्रावधान किया गया है। वित्त मंत्री अरुण जेटली ने शुक्रवार को बताया कि नई पॉलिसी से इनोवेशन और क्रिएटिविटी बढ़ेगी। इकोनॉमिक ग्रोथ और आंत्रप्रेन्योरशिप को गति मिलेगी। इससे भारत अगले कुछ वर्षों में इनोवेटिव इकोनॉमी बन जाएगा। टैक्स इन्सेंटिव के जरिए भी इनोवेशन को प्रोत्साहित किया जाएगा। जेटली ने कहा कि भारत में मजबूत ट्रेडमार्क कानून पहले से है। नई पॉलिसी ट्रेडमार्क रजिस्ट्रेशन की व्यवस्था को और मजबूत करेगी। अगले साल से ट्रेड मार्क रजिस्ट्रेशन में केवल एक माह का समय लगेगा। अभी इसमें महीनों और कई बार तो वर्षों लग जाते हैं। जेटली ने कहा कि ट्रेड, कॉमर्स और इंडस्ट्री में नए-नए इन्वेंशन हो रहे हैं। उनकी सुरक्षा के लिहाज से आईपीआर पॉलिसी अहम है। इससे हेल्थकेयर सेक्टर को भी लाभ मिलेगा। इस पॉलिसी का मकसद जीवन रक्षक दवाओं को बढ़ावा देना है। दवा

बनाने वाले को यह भी देखना चाहिए की इनकी कीमत दूसरे देशों से कम हो। जेटली ने दावा किया कि आईपीआर नीति डब्लूटीओ के नियमों के अनुरूप है। वित्त मंत्री ने कहा कि हर देश को अपने आर्थिक हितों की रक्षा का अधिकार है।एकाधिकार सिर्फ उन्हें पसंद है जिनका बाजार पर एकाधिकार होता है।

जेटली बोले, हमारे लिए सस्ती दवाएं जरूरी जेटलीने भारत के पक्ष को सही ठहराया। उन्होंने कहा कि यहां कम कीमत पर दवाएं उपलब्ध कराना जरूरी है। पेटेंट की समय सीमा 20 साल के बाद तभी बढ़ाई जाएगी अगर दवा में नई खोज होगी, सिर्फ मामूली बदलाव से नहीं। भारत की दवा नीति से खफा है अमेरिका भारत की आईपीआर नीति को अमेरिका 'अपर्याप्त' मानता है। इसलिए उसने 'स्पेशल 301' रिपोर्ट में भारत को 'प्रायरिटी वाच लिस्ट' में रखा है। दवा कंपनियों के दबाव में अमेरिकी प्रशासन कई बार यह मुद्दा उठा चुका है।

अमेरिका और दूसरे विकसित देशों ने भारतीय पेटेंट कानून 1970 की धारा 3(डी) और 'कंपल्सरी लाइसेंसिंग' की नीति पर सवाल उठाए हैं। इस धारा के मुताबिक पुराने फॉर्मूले में मामूली बदलाव करके पेटेंट अधिकार हासिल नहीं किए जा सकते। नई और पुरानी दवा की प्रॉपर्टी में व्यापक अंतर होना चाहिए। वित्त मंत्री ने कहा, 'हमारे पेटेंट कानून की धारा 3(डी) को बहुत से देशों ने अपनाया है। जाहिर है कि कुछ दवा कंपनियों को यह नियम पसंद नहीं है। इसलिए वे बार-बार यह मुद्दा उठाती रहती हैं। लेकिन मेरे विचार से भारत का पक्ष सही है।'

कंपल्सरी लाइसेंसिंग की नीति जारी रहेगी : वित्त मंत्री जेटलीने कहा कि पुराने पेटेंट कानून में कंपल्सरी लाइसेंसिंग के प्रावधान हैं। वह बने रहेंगे। इसमें सरकार पेटेंट अधिकार वाली दवा को बनाने की इजाजत किसी दूसरी कंपनी को देती है। आम तौर पर पेटेंट वाली दवा महंगी होती है। कंपल्सरी लाइसेंसिंग का मकसद उस दवा का सस्ता वर्जन लोगों को उपलब्ध कराना है। हालांकि ऐसा खास मामलों में ही होता है।

दैनिक जागरण

भारत-नेपाल की बढ़ती दूरी

नेपाल की राष्ट्रपति विद्या देवी भंडारी का भारत दौरा रद होने, भारत में नेपाली राजदूत दीप कुमार उपाध्याय की वापसी और नेपाल में भारतीय राजदूत रंजीत राय को अवांछित घोषित किए जाने संबंधी अफवाह भारत-नेपाल संबंधों में बढ़ती खाई का एक और प्रमाण है। उपाध्याय को वापस बुलाने संबंधी आदेश प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली की कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा माओवादियों के साथ वाली गठबंधन सरकार बचा लेने के एक दिन बाद आया। माओवादियों की इच्छा अपने मुखिया पुष्प कमल दहल प्रचंड की अगुआई में एक राष्ट्रीय सरकार गठन करने की थी। उनकी यह इच्छा इसलिए धरी रह गई, क्योंकि प्रचंड पर्याप्त समर्थन जुटाने में नाकाम रहे। दूसरी ओर ओली ने गृहयुद्ध से संबंधी मामलों को वापस लेने सहित नौ सूत्री समझौता कर माओवादियों की शिकायतों को दूर करने का वादा किया। ओली की पार्टी के कुछ सदस्यों का मानना है कि उनकी सरकार को गिराने की साजिश नई दिल्ली में रची गई और उपाध्याय और रंजीत राय की उसमें भागीदारी थी। उपाध्याय को वापस बुलाने का फैसला ओली सरकार से उनके कथित असहयोग और रंजीत राय के साथ मधेस क्षेत्र के दौरे से भी जुड़ा था। हालांकि नेपाल का कहना है कि राष्ट्रपति की भारत यात्रा रद होना और राजदूत वापस बुलाने का फैसला एक-दूसरे से जुड़ा नहीं है और रंजीत राय के निष्कासन की अफवाह आधारहीन है, फिर भी इस सबसे वास्तविक तस्वीर सामने नहीं आती।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की 2014 की नेपाल यात्रा और अप्रैल 2015 में नेपाल में आए भीषण भूकंप में भारत की सक्रिय मदद के बाद दोनों देशों के संबंध एक नई ऊंचाई पर पहुंच गए थे। दोनों देशों के संबंधों में भटकाव नवंबर 2015 में नेपाल द्वारा अपना संविधान लागू करने के बाद शुरू हुआ। भारत को पहले से पता था कि नया संविधान नेपाल की राजनीति में पहाड़ी क्षेत्र के लोगों का प्रभुत्व कायम करेगा और तराई क्षेत्र के लोगों के प्रतिनिधित्व को कमजोर करेगा, लेकिन वह समय रहते सक्रिय नहीं हुआ। मधेसियों ने नए संविधान का विरोध जिस तरह किया उससे भारत-नेपाल सीमा बाधित हुई। भारत ने इस अवरोध

को खत्म करने में सक्रियता नहीं दिखाई, बल्कि तटस्थ बना रहा। परिणामस्वरूप नेपाल में आवश्यक वस्तुओं की किल्लत हो गई। इस मौके का फायदा चीन समर्थकों ने उठाया और नेपाल में भारत विरोधी भावनाओं को भड़काया। हालांकि नई दिल्ली पहले भी नेपाली शासकों पर दबाव बनाने के लिए इस युक्ति का उपयोग करती थी, लेकिन इस बार यह दांव उल्टा पड़ गया। तराई के लोगों ने भी नई दिल्ली से खुद को उपेक्षित महसूस किया। उन्हें किसी तरह की मदद नहीं मिली। गतिरोध तब खत्म हुआ जब नेपाल तराई क्षेत्र के लोगों की शिकायतों को दूर करने के लिए संविधान में कुछ संशोधन को राजी हुआ। इस बीच नेपाल ने भारत पर दबाव बनाने के लिए चीनी कार्ड खेल दिया। बीजिंग ने पेट्रोलियम पदार्थों और दूसरी जरूरी वस्तुओं की आपात आपूर्ति भी की। हालांकि चीन नेपाल की सभी जरूरतों को पूरा नहीं कर सका, लेकिन बीजिंग ने अपने हावभाव से नेपाल के दिल में अपने लिए जगह बना ली। नेपाली प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली ने प्रचलित प्रथा तोड़ सबसे पहले चीन की यात्रा करने की इच्छा जताई। चौतरफा दबाव के बाद उन्होंने चीन से पहले भारत का दौरा किया। उनकी यात्रा के दौरान दोनों देशों ने फिर से संबंधों में मिठास लाने की बात कही।

नेपालियों को इसका अहसास है कि नेपाल न सिर्फ बंदरगाह विहीन देश है, बल्कि भारत पर निर्भर है। भारत के बाद ओली ने चीन की सात दिनों की यात्रा की। उन्होंने चीन के साथ ट्रांजिट और ट्रांसपोर्ट समझौता किया, जिसके तहत चीन नेपाल को अपने बंदरगाह उपलब्ध कराएगा और चीन दोनों देशों के बीच रेल संपर्क का विकास करेगा। नेपाल और चीन की नजदीकी भारत के लिए एक झटका है, क्योंकि नेपाल अपना साठ फीसद आयात भारत के जरिये पूरा करता है। चीन के साथ समझौते से भारतीय बंदरगाहों पर नेपाल की निर्भरता खत्म हो जाएगी। हिमालय जो कि नेपाल और चीन के संपर्क में एक बाधक बना था, अब दोनों देशों को जोड़ने वाला बन गया है। ट्रांजिट एंड ट्रेड समझौता दक्षिण एशिया में नए समीकरण का सूत्रपात करेगा। चीन का नेपाल में प्रवेश भारत को घेरने की उसकी योजना का हिस्सा है। चीन द्वारा नेपाल में इंफ्रास्ट्रक्चर विकास की योजना भारतीय सीमाओं तक चीनी सैनिकों की पहुंच सुनिश्चित करेगी। नेपाल-चीन के बीच रेल संपर्क की बहाली सिलिगुडी कॉरिडोर पर खतरा बढ़ाएगी। यही एक मात्र कॉरिडोर है जो पूर्वोत्तर को भारत से जोड़ता है।

नेपाल में चीन की मौजूदगी का अर्थ है कि भारत के अलगाववादियों और माओवादियों तक उसकी पहुंच बढ़ जाएगी। साथ ही भारत-नेपाल सीमा पर सुरक्षा संबंधी दूसरी समस्याएं पैदा होंगी। इस सबके बावजूद भारत के लिए एक उम्मीद की किरण है। नेपाल में इंफ्रास्ट्रक्चर की हालत दयनीय होने, दुर्गम भौगोलिक परिस्थितियां, चीन के गियोरोंग से लगती नेपाली सीमा केरुंग तक रेल लिंक के अभाव के कारण नेपाल तुरंत ही किसी तीसरे देश से व्यापार के लिए चीन का इस्तेमाल नहीं कर सकता। चीन-नेपाल रेल लिंक के विकास में अभी सालों लगेंगे। पूर्व में तत्तापानी के जरिये दोनों देशों के बीच व्यापार होता था, लेकिन 2015 के भूकंप के बाद वह भी बंद हो गया। नेपाल की सीमा से चीन के सबसे नजदीकी बंदरगाह तियानजिन की दूरी तीन हजार किमी है, जबकि भारतीय बंदरगाह हल्दिया की दूरी एक हजार किमी से भी कम है। स्पष्ट है कि नेपाल का फायदा भारतीय बंदरगाह के प्रयोग में है। चीन-नेपाल के बीच रेल लिंक बनाना भौगोलिक, तकनीकी और आर्थिकलिहाज से दुष्कर है। नेपाल 24 रास्तों के जरिये भारत से व्यापार करता है। भारत ने नेपाल के साथ पांच रेल कॉरिडोर बनाना तय किया है।

भारत को नेपाल के साथ संबंधों में आई तल्खी को खत्म करने के लिए नई रणनीति पर काम करना होगा। भारत को किसी एक दल को तरजीह देने के बजाय सभी पार्टियों के साथ मेल जोल बढ़ाना चाहिए। इसके साथ ही नेपाली सेना और नागरिक समाज से संवाद बढ़ाना चाहिए। दोनों का हित एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। नेपाल विकास करेगा तो भारत भी विकास करेगा। भारत-नेपाल संबंधों में मजबूती चीनी खतरे को कम करेगी। यदि भारत वहां ढांचागत विकास नहीं करेगा और नेपाल को अपनी अर्थव्यवस्था का हिस्सा नहीं बनाएगा तो चीन को वहां पैर फैलाने मौका मिल जाएगा। कम्युनिस्टों से भरी नेपाल की गठबंधन सरकार भारत विरोधी और चीन समर्थक है। चीन ने नेपाल को मदद देने में भारत को पीछे छोड़ दिया है। यदि नई दिल्ली नेपाल को चीन के पाले में जाने से रोकना चाहती है तो उसे तुरंत कदम उठाने चाहिए।

[लेखक आरपी सिंह, सेवानिवृत्त ब्रिग्रेडियर हैं]

THE ECONOMIC TIMES

It's high time our lawmakers decriminalise defamation

It's not every day that one gets the likes of Subramanian Swamy, Arvind Kejriwal and Rahul Gandhi batting for the same side. And just because these three eminences, among others, are fighting to save their impressively thick skin by demanding that defamation be decriminalised, does not mean that their case is an invalid one. The Supreme Court, by dismissing their petitions, has found the damage wrought by defamation — any statement perceived to defame a third party's reputation, whether as libel (written) or slander (spoken) — to be far greater than the damage wrought by shutting up a complaint against someone. One would have thought that a civil suit would resolve matters between two private parties better. In India, however, Sections 499 and 500 of the IPC have insisted that defamation is a crime, that it puts 'society' under threat (the word 'anarchy' having been bandied about in court). With Friday's judgment, it will continue to be so.

One of the arguments trotted out to keep defamation criminal was rather curious: why fix it when it has worked for so long. The petitioners took the same road, except they approached it from the other end, highlighting the archaic nature of the law. But the more serious argument remains that treating defamation as a crime gags people from speaking unpleasant truths. 'Motormouth' Swamy may have taken slander to a political art form. But less agile people are forced to remain silent, fearing a two-year jail stint.

The Centre's concern for maintaining people's reputation is as touching as the court's is compelling. But to protect reputations via criminal law at the cost of gagging complaints is akin to criminalising accusations of adultery lest such charges are fabricated. There are better ways to resolve slander too. And if there is concern about the slowness with which civil cases proceed, perhaps the problem lies in making them move faster, and not to perpetuate a two-toll system for civil and criminal law. Instead, what we are left with is the strange business of a matter, which can be settled without it being treated as a crime, criminalised simply because the law says so. It's high time our lawmakers decriminalise defamation.

Defamation to Remain Criminal Offence, Rules SC

Samanwaya Rautray

Rejects appeals filed by Rahul, Subramanian Swamy & Kejriwal India's Supreme Court declared that the right to freedom of expression is not an absolute one, upholding the constitutional validity of penal provisions in the law on defamation and rejecting appeals filed by politicians across the spectrum including Rahul Gandhi, Subramanian Swamy and Arvind Kejriwal.

Defamation will remain a criminal offence, the apex court said on Friday , justifying its decision on the ground that free speech cannot be used to tarnish another's reputation, critical to leading a life of dignity .

"The principal objective of the law of defamation, civil or criminal, is to protect the reputation and dignity of the individual against scurrilous and vicious attacks.... Right to free speech cannot mean that a citizen can defame the other. Protection of reputation is a fundamental right. It is also a human right. Cumulatively it serves social interest," said the bench of justices Dipak Misra and PC Pant. "Reputation of one cannot be

allowed to be crucified at the altar of the other's right of free speech. The legislature in its wisdom has not thought it appropriate to abolish criminality of defamation in the obtaining social climate.“

The central government had strongly defended the law in its current form.

Congress vice-president Gandhi, BJP MP Swamy and Delhi Chief Minister Kejriwal all face defamation cases over political statements. They had wanted the law diluted so that defamation would be a civil offence rather than a criminal one. That would have meant monetary damages if proven rather than jail time. Such compensation may not always be adequate, the court said in its 270-page judgement.

Freedom of speech cannot be allowed to erode “individual dignity which is also an integral part under Article 21 of the constitution,“ the bench said. That injury to reputation -which covers self-respect, honour and dignity -can be adequately compensated in monetary terms is a misconception, it added.

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Bankruptcy Code: Creative destruction

Bankruptcy Code will ease dispute resolution, embolden entrepreneurs.

In a welcome break from the logjams in the Upper House that have held back crucial economic reforms such as the GST, the Rajya Sabha on Wednesday passed the Insolvency and Bankruptcy Code 2016. It received the Lok Sabha’s nod on May 5. This is a much overdue reform that aims to bring in a modern framework to deal with bankruptcy and insolvency of a variety of economic players. The code will consolidate and amend the laws relating to reorganisation and insolvency resolution of corporate persons, partnership firms and individuals. When it comes to “resolving insolvency”, India ranks an abysmal 136 out of 189 countries according to the Doing Business 2016 report. On average, secured creditors in India recover only 25.7 cents for every dollar of credit from an insolvent firm at the end of insolvency proceedings and the whole process takes 4.3 years to conclude. This contrasts poorly with the OECD countries where creditors recover 72.3 cents within just 1.7 years on average. With the new code in place, it is expected that India will witness a drastic improvement on both parameters.

The trouble is, given the archaic laws governing insolvency — some of them over a century old — creditors are relatively powerless when faced with a default while the promoters are, in the words of RBI Governor Raghuram Rajan, able to “insist on their divine right to stay in control”. This, in turn, has a chilling impact on availability to new businesses. A stated objective of the new law is to promote entrepreneurship, availability of credit, and balance the interests of all stakeholders. Unlike in the past, when an insolvency case dragged on for years on end, under the new code, if a firm defaults, control would shift from the promoters to a committee of creditors, which will have 180 days to evaluate various proposals for resuscitating the company, or else liquidate the assets.

However, enactment of the code is just a beginning. For effective results, the government will have to ensure that its so-called pillars — insolvency professionals, information utilities, a strengthened adjudication mechanism, and a regulator — are institutionalised

---